ISBN - 978-81-89740-59-7

NAAC Accredited 'B'

ज्ञान - विज्ञान विमुक्तये

NATIONAL SEMINAR

On

HUMAN RIGHTS

NOV 19th, 2016

Seminar Book

Organized by

Department Of Commerce & Management

PATRON & PRINCIPAL
Dr. A. K. Jain

CHIEF EDITOR
Dr. R.C.Gupta

EDITOR
Dr. M.L.Soni
Dr. Shruti Dubey

Govt. Post Graduate College
Bina (Sagar) M.P.

NAAC B Accredited

2016

 ISBN - 978-81-89740-59-7

भारत में क्षेत्रीय आंदोलनों में मानव अधिकारों का संकट

डॉ. दीपक मोदी
अतिथि विद्वान
डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भारत में मानव अधिकारों का संघर्ष एक समग्र और अनवरत मानवीय संघर्ष है और सभी प्रकार की सत्ताओं के साथ उसका रिश्ता द्वन्द्वात्मक ही रहता है। क्योंकि भारत का शक्तिशाली वर्ग कागज पर या भाषणों में मानव अधिकारों के प्रति चाहे जितनी प्रतिबद्धता जाहिर करें, वास्तविक जीवन में यह प्रतिबद्धता बहुत कम दिखाई देती है। भारत में सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रीय असंतुलन ने क्षेत्रीय संघर्षों को जन्म दिया है। क्षेत्रीय संघर्ष जब अपने क्षेत्र से लगाव के चलते क्षेत्र के विकास की बात सामूहिक आंदोलन के रूप में करते हैं तो इन आंदोलनों को समाप्त करने की कोशिश में राज्य सत्ताओं द्वारा जो हिंसक साधनों का प्रयोग पुलिस व सेना के माध्यम से किया जाता है। तब मानवाधिकारों का संघर्ष का यह क्षेत्रीय स्वरूप मानवाधिकारों के संकट के रूप में उपस्थित हो जाता है।

भारतीय लोकतंत्र के 70 वर्ष यदि राष्ट्रीय एकता के प्रतीक रहे हैं किन्तु राष्ट्रीय अस्मिता से बढ़कर क्षेत्रीय अस्मिताओं ने झारखंड, उत्तराखंड, असम, बुन्देलखण्ड, बोडोलैण्ड, असम, पंजाब व कश्मीर आंदोलनों ने जो क्षेत्रीय संघर्ष खड़ा किया है उस कारण से भारत के अन्य भागों में यह संघर्ष समय-समय पर उपस्थित होता है और इस प्रकार मानवाधिकारों का संकट भी खड़ा हो जाता है। प्रस्तुत शोध पत्र में क्षेत्रीय अस्मिताओं का विश्लेशण मानवाधिकारों के परिप्रेक्ष्य में किया गया है।

मुख्य शब्द - मानव अधिकार, लोकतंत्र, क्षेत्रीय आंदोलन, क्षेत्रीयतावाद, क्षेत्रीय अस्मिता, राष्ट्रवाद, हिंसा, अलगाव,

प्रस्तावना -

भारत में एक महत्वपूर्ण समस्या राष्ट्रीय एकीकरण की रही है। राष्ट्रीय एकीकरण की प्रक्रिया भारत की राजनीतिक प्रक्रिया से गहराई से जुड़ी हुई है। राष्ट्रीय एकीकरण की प्रक्रिया के संदर्भ में ही भारत के राजनीतिक विकास को समझा जा सकता है। राष्ट्रीय एकीकरण के भावात्मक तत्वों की जब हम खोज करते हैं तो हमारा ध्यान उन जातीय, भाषागत, धार्मिक, क्षेत्रीयता पर आधारित 'परम्परागत निष्ठाओं' की ओर जाता है जो क्षेत्रीयवाद को बढ़ावा देते हैं। क्षेत्रवाद के अनेक पक्ष है। सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक इत्यादि। परन्तु राजनीतिक धरातल पर इसका तात्पर्य पृथकतावाद से लिया जा सकता है जिसके अंतर्गत विभिन्न क्षेत्रों के निवासी अपने पृथक अस्तित्व, आर्थिक और सामाजिक विकास भाषाई और सांस्कृतिक अस्मिता और स्वशासन की मांग करते हैं। अनौपचारिक रूप में क्षेत्रवाद सौदेबाजी का एक हथियार है जो दबाब की राजनीति के प्रतीक के रूप में कार्य करता है। आंध्रप्रदेश और तमिलनाडू का गठन, हरियाणाा और पंजाब का विभाजन, असम, हिमाचल प्रदेश, मणिपुर, अरूणाचल प्रदेश और त्रिपुरा इत्यादि को राज्य को दर्जा दिया जाना क्षेत्रीय दबाबों को संतुष्ट करने के की परिणाम था।[1]